International Journal of Applied Research 2015; 1(8): 117-118

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2015; 1(8): 117-118
www.allresearchjournal.com
Received: 04-05-2015
Accepted: 06-06-2015

डॉ0 शिवदत्त शर्मा
अध्यक्ष हिन्दी विभाग
राजकीय स्नातकोत्तर
महाविद्यालय ढलियारा
कांगड़ा हिमाचल प्रदेश

Correspondence:
डॉ0 शिवदत्त शर्मा
अध्यक्ष हिन्दी विभाग
राजकीय स्नातकोत्तर
महाविद्यालय ढलियारा
कांगड़ा हिमाचल प्रदेश

सन्त कबीर और रविदास दर्शन पर प्रभाव

डॉ0 शिवदत्त शर्मा

यह नितान्त सत्य है कि पूर्व प्रचलित एवं तात्कालिक साधना पद्धतियों का कुछ न कुछ प्रभाव सन्त कबीर की साधना पद्धति एवं दर्शन पर अवश्य दिखाई देता है, यह अलग बात है कि उन्होनें उन्हें आत्मसात् कर एक सरल पद्धति जनसाधारण के समक्ष प्रस्तुत की। जहाँ तक कबीर की साधना पद्धति का प्रश्न है सन्त कबीर बौद्धों, सिद्धों, नाथों एवं सूफियों की साधना पद्धतियों से अवश्य प्रभावित दिखाई देते हैं, यह भी सत्य है कि उन पर सर्वाधिक प्रभाव वैष्णव धर्म का ही परिलक्षित होता है। यह वास्तविकता है कि भारत में सबसे अधिक प्रचार वैष्णव भक्ति का ही था जब कबीर का आविर्भाव हुआ; इसके अतिरिक्त नाना प्रकार की साधना पद्धतियाँ उस समय प्रचलित थीं।[1] तन्त्र– मन्त्र, तीर्थव्रती, दान पुण्य कर्ता, उदासी एवं वेद – पाठी सभी अपनी – अपनी साधनाओं को श्रेष्ठ मानकर उनका अनुसरण कर रहे थे।

डॉ. भण्डारकर वैष्णव मत को ही एकान्तिक धर्म कहते हैं जिसका आधार भगवद् गीता जैसे पवित्र ग्रंथ को माना जाता है। सांप्रदायिकता के कुचक्र में यही पाँच रात्र या भागवत् धर्म कहलाया। सात्वत् धर्म के उपरान्त इसका समन्वय नारायणी धर्म के साथ हुआ तथा इस पर योग एवं सांख्य दर्शनों का प्रभाव पड़ा। छठी और सातवीं शताब्दी में बौद्ध धर्म का पतन होने पर आलवार भक्तों के रुप में यह धर्म पुनः पल्लवित हुआ। मध्ययुगीन आचार्यों शंकराचार्य से लेकर बल्लभाचार्य तक सभी ने इसे परिपुष्ट किया। शंकराचार्य के प्रभाव से ही वैष्णव धर्म में माया की छाया दिखाई दी और रामानुजाचार्य के प्रभाव से ही इसमें भक्ति तत्व का चरम विकास हुआ।[2]

सन्त कबीर पर वैष्णवों की प्रेम – प्रधान भकित का प्रभाव व्यापक रुप से दिखाई देता है चाहे उसमें कुछ मौलिक परिवर्तन कर उसे उन्होनें नए रुप में प्रस्तुत किया है।[4] वाणी में वैष्णवों की प्रेम – प्रधान भक्ति अक्षरशः कबीर ने नहीं अपनाई। उन्होनें प्रेमा – भक्ति का योग – साधना के साथ संयोग करके उसे जन मानस के अधिक अनुकूल बना दिया। इस प्रकार प्रेमा भक्ति के साथ योग – साधना का सम्मिश्रण कबीर में ही दिखाई देता है। सन्त रविदास जैसे समकालीन सन्तों में योग साधना के मिश्रण का अभाव है। यही बिन्दु कबीर और सन्त रविदास की साधना पद्धति को अलग कर देता है।

सन्त कबीर के विट्ठल सम्बन्धी पदों में महाराष्ट्र के सन्तों की प्रेमा भक्ति का प्रभाव भी स्पष्ट दिखाई देता है :–

मन के मोहन बीठुला, यहु मन लागो तोहि रे।
चरन कमल मन मानियां, और न भावै मोहि रे।।

यह प्रेमा भक्ति कबीर को सिद्धों और नाथों की परम्परा से अलग स्थापित करती है।[5] इसी प्रेमा भक्ति के प्रभाव के कारण ही अक्खड़ एवं कर्कष भाषा के स्वामी कबीर हमको सुसंस्कृत एवं सभ्य तथा कोमल भी कहीं कहीं वाणी में दिखाई देने लगते हैं:–

कबीर कूता राम का मुतिया मेरा नाउं।
गलै राम की जेबड़ी जित खेंचै तित जाउं।।

वैष्णव शक्ति के प्रभाव से ही कबीर के काव्य में शील, क्षमा, दया उदारता आदि उदात गुणों के कहीं कहीं दर्शन हो जाते हैं। वैष्णव भक्ति पद्धति के अनुसार कबीर ब्रह्म को निर्गुण एवं सगुण दोनों रुपों में स्वीकार नहीं करते अपितु वे सगुण – साकार की जगह निर्गुण निराकार निरंजन की भक्ति की बात करते हैं:–

सती राम सतगुरु की सेवा, पुजहूं राम निरंजन देवा।

सन्त रविदास जैसे समकालीन सन्त में ऐसी कट्टरता दिखाई नहीं देती, वे वैष्णव भक्ति के अनुसार निर्गुण एवं सगुण दोनों रुपों के प्रति श्रद्धा व्यक्त करते हैं।

सन्त कबीर की साधना पद्धति एवं दर्शन पर नाथ संप्रदाय का भी प्रभाव परिलक्षित होता है। 12वीं एवं 13वीं शताब्दी में नाथ संप्रदाय का प्रचार चरम पर था। नाथ पंथ जिसके प्रवर्तक आदिनाथ माने जाते हैं तथा इस संप्रदाय में शिव को महत्व दिया जाता है, प्रकारान्तर से यह शैव मत ही सिद्ध होता है हालांकि हजारी प्रसाद नाथ संप्रदाय को बौद्धों और शाक्तों की परम्परा का धार्मिक सम्प्रदाय मानते हैं। नाथ – पंथ में नाथ शब्द का अर्थ मुक्ति देने वाला तथा आदि धर्म का वाचक और तीनों लोकों की स्थिति का कारण माना जाता है।

नाथ पंथ के अनुसार पिंड में ही ब्रह्म (ईष्वर) का वास माना गया है। अतः साधक को अपने ही अन्दर ईश्वर को मानकर ईश्वर प्राप्ति का प्रयास करना चाहिए। वेद कतेब का विरोध सर्वविदित ही है। नाथ पंथ में वज्रयान के अनुसार नाद, विन्दु आसन, मुद्रा, प्राणायाम आदि को स्वीकार किया गया है। जाति – पाति विरोध एवं चमत्कार का समावेश नाथ पंथ में मुख्य बिन्दु रहा। गुरु महिमा इसमें सर्वोपरि है। सन्त कबीर में भी ये सब विषेषताएं उनकी वाणी में मिलती हैं, हाँ कबीर को बाह्यडम्बर बिल्कुल स्वीकार्य नहीं था जिसका विरोध जगह – जगह उनकी वाणी में मिलता है। इस विरोध की आँधी में चाहे वैष्णव हों या शाक्त, मुस्लिम हो या हिन्दू, नाथपंथी हों या कोई ओर कोई बच नहीं सका है। एक पद देखिएः–

बाबा जोगी एक अकेला, जाके तीर्थ व्रत न मेला।
झोली पत्र विभूति न बटुआ, अनहद बेन बजावै।

सन्त कबीर की तुलना में सन्त रविदास ने नाथ – पंथ का अनुसरण प्रसंग वश ही किया है। उनकी वाणी में नाथ पंथ के प्रति अधिक लगाव या दुराव नहीं है, उन्होनें साधारण भाव – भक्ति की लहरी में उपरोक्त नाथ पंथी विशेषताओं को स्वीकार किया है जो स्वाभाविक भी है। सन्त कबीर नाथ पंथ से विशेषतः प्रभावित दिखाई देते हैं।[6] उनकी वाणी में न केवल नाथ पंथ की अन्य विशेषताओं को उन्होनें आत्मसात् किया है बल्कि नाथ पंथियों के अनुसार ही नाद और बिन्दु के योग से सृष्टि की संरचना को स्वीकार किया है। उनके अनुसार नाद ही ईश्वर का अंश है और बिन्दु शरीर का अंश है। जब बिन्दु नाद में लय हो जाता है तभी मुक्ति संभव है।

उनका निम्न पद देखिएः–

अव्यक्त नावै बिन्दु गगन बाजै, सहद अनहद बोलै।

इस तरह कबीर की तुलना में सन्त रविदास नाथ – पंथ की कट्टर शब्दावली आदि से स्वतंत्र हैं।[7] रविदास वाणी में भी नाथ पंथी शब्दावली का पूर्णतः अभाव नहीं है, अनेक पदों में नाथ पंथी शब्दावली नाद, बिन्दु, सुरति, सहस्त्रकमता आदि शब्द आए हैं परन्तु उतनी कट्टरता एवं सहजता रविदास वाणी में प्रतीत नहीं होती, जितनी कबीर वाणी में देखने को मिलती है। कबीर पर नाथ संप्रदाय का प्रभाव अधिक है, यही कारण है कि उनका दर्शन भी नाथ – संप्रदाय के प्रभाव से मुक्त नहीं है।

सन्त कबीर ने नाथ पंथ या हठ योग की शब्दावली का प्रयोग प्रायः अपनी वाणी में मुख्य रुप से किया है। कुण्डलिनी, मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपुर, अनाहती, विशुद्ध और आज्ञाचक्र इन छः चक्रों का उल्लेख उनकी वाणी में भी है।

सन्त कबीर को जहाँ जिस पद्धति में अच्छा लगा, वे हिचक उन्होनें उसे अपनी साधना पद्धति और दर्शन में सम्मिलित कर लिया ऐसा प्रतीत होता है कि उन्हें किसी दर्शन पद्धति में विशेष लगाव नहीं था और न ही किसी विशेष के प्रति दुराव। जहाँ जो ठीक लगा उसे अपनाया जो बुरा लगा उसे लताड़ दिया। यह सत्य है कि दार्शनिक विचारधारा में वैष्णवों एवं नाथपंथियों का कबीर पर प्रभाव रहा है, परन्तु इसके साथ ही वे बौद्धों और सिद्धों की विचारधारा से भी न्यूनाधिक प्रभावित रहे हैं। अनेक सिद्धों की रचनाओं का प्रभाव कबीर वाणी में देखा जा सकता है। आचार्य परशुराम भी इसी मत के हैं।[8]

सन्त कबीर पर प्रेम – वाद का प्रभाव भी दिखाई देता है। कबीर की प्रेम साधना में दाम्पत्य – भाव की महता सूफियों के प्रेम – वाद से प्रभावित दिखाई देती है। सूफी साधना अनुभूति परक है। अनुभूति प्रेम पर आश्रित है, प्रेम की चरम परिणति दाम्पत्य प्रेम में है। यही कारण है कि सूफियों की अभिव्यक्ति दाम्पत्य प्रतीकों से ही होती है। सूफी अभिव्यक्ति की यह विशेषता कबीर में अक्षरशः दिखाई देती है क्योंकि कबीर के रहस्यवाद की अभिव्यक्ति अधिकतर दाम्पत्य प्रतीकों के द्वारा ही हुई हैः–

हरि मेरा पीव भाई हरि मेरा पीव।
हरि बिन रहि न सके मेरा जीव।
हरि मेरा पीव मैं हरि की बहुरिया,
राम बड़े मैं छुटुक लहूरिया।। [9]

समकालीन सन्त रविदास वाणी में भी इसी प्रकार प्रेमा भक्ति का अनूठा रुप दिखाई देता है। यह सत्य है कि सन्त रविदास ने कबीर की तरह पूर्णतः इस प्रकार के सम्बन्धों का जिक्र कुछ ऐक पदों में किया है, इसके अतिरिक्त सखा, भक्तवत्सल, चन्दन – पानी, घनवन – मोर आदि कई सुरम्य प्रतीकों के द्वारा अपनी भावाभिव्यक्ति की है।

कबीर ने तो सूफियों की प्रेमा भक्ति के साथ – साथ उनकी शब्दावली का भी अपनी वाणी में खुलकर प्रयोग किया है –
वेद कतेब इफतरा भई दिल का फिकरु न जाइ।
टुक वमु करारी जउ करहु, हाजिर हजूर खुदाइ।।
वंदे खोज दिल हर रोज़ा, फिरु परेसानी माहिं।
इहु जू दुनियां सिहरु मेला दस्त गीरी नाहिं।।

यही नहीं नूर, हक, इश्क, खुमार, मारिफत आदि अनेक सूफी शब्दावली के दर्शन कबीर वाणी में होते हैं। सूफियों की दाम्पत्य प्रतीक – पद्धति को तो उन्होनें अपने रहस्यवाद की अभिव्यक्ति का प्रमुख साधन बनाया है। यह ठीक है कि कबीर ने प्रत्यक्ष रुप से सूफियों के तत्वों को स्वीकार नहीं किया किन्तु फिर भी सूफी सन्त संगति के कारण सूफियों की अनेक बातें कबीर दर्शन एवं साधना भक्ति एवं अभिव्यक्ति का अटूट हिस्सा बन गई।

सम्भवतः यह इसलिए भी हुआ क्योंकि अद्वैत वेदान्त और सूफी मत में पर्याप्त साम्य भी है। कबीर अद्वैतवादी थे, शायद इसी कारण कुछ विद्वान इन्हें सूफी मत से प्रभावित मान लेते हैं। कुछ भी हो, यह सत्य है कि कबीर ने बड़े दिल से उन सभी बातों को अपनी वाणी में सम्मिलित कर लिया जो उन्हें अच्छी लगीं तथा कबीर की कसौटी पर खरी उतरीं। सन्त रविदास किसी विवाद में पड़े बिना खण्डन – मण्डन से दूर सहज भक्ति में अनुरक्त रहे, ऐसा प्रतीत होता है उनका लक्ष्य आत्म संतोष एवं प्रभु मिलन के लिए सुगमतम रास्ते पर चलकर आत्म साक्षात्कार एवं उस प्रभु में विलीन होना है जहाँ से पृथक् हुए थे।

सदर्भ सूची

1. उपाध्याय डा बलदेव वैष्णव सम्प्रदायों का साहित्य और सिद्धान्त भारतीय धर्म और दर्शन का अनुशीलन भारतीय दर्शन
2. चतुर्वेदी परशु राम उत्तरी भारत की सन्त परम्परा
3. चौहान डा प्रताप कबीर साधना और साहित्य
4. शर्मा वेणी प्रसाद सन्त रविदास वाणी
5. चतुर्वेदी परशु राम सन्त काव्य
6. तिवारी पारस नाथ कबीर वाणी